डा0 शहाना तबस्सुम (नेट क्वालिफाइड)
प्रवक्ता-चित्रकला विभाग
एम0एल0 एण्ड जे0एन0के0गर्ल्स कालेज, सहारनपुर।

बसोहली चित्र-शैली में लोक-तत्व

पहाड़ी कला-आन्दोलन की बसोहली शैली के चित्र लोक-परम्परा के अधिक निकट रहे हैं और इसमें निर्वाह भी लोकग्राह्य मानदण्ड के अनुकूल ही होता रहा। अतः इनमें लोक कला के शैलीगत गुण लगभग अक्षुण्य ही बने रहे हैं। बसोहली चित्र-ौली को लोक-कला परम्परा ने न केवल माध्यमों, रंगों, रेखाओं में ही प्रभावित किया है अपितु इस चित्र-शैली की प्रतीकात्मक और शैलीगत अभिव्यक्ति में भी लोकतत्व का बहुत योगदान रहा है। मानव की मूल अनुभूतियों से प्रसूत इन प्रतीकों में परानुभूतिपरक गुण पूरी तरह से विद्यमान हैं।

बसोहली चित्रों में प्रयुक्त ये प्रतीक केवल चित्रकला के सम्बन्ध में ही सार्थक हों, ऐसा नही। लोक गीत और लोक कथाऐं भी इन्ही माध्यमों से अभिव्यंजित हुई हैं उदाहरणार्थ-बादल, पपीहा, नाचते मोर, पशु-पक्षियों के जोड़े आदि कुछ इस प्रकार के प्रतीक बसोहली चित्रों में उभरे हैं जो परम्परागत रूप से अनंतकाल से यहाँ लोकमानस में अभिव्यक्ति के सामान्य माध्यम रहे हैं।

बसोहली चित्र-शैली तथा पहाड़ी क्षेत्र की अन्य उपशैलियाँ अपने विकास के आरम्भिक दौर में नितांत रूप से लोक कला परम्परा के ऋणी हैं। कालांतर में परोक्ष रूप से पड़े मुग़ल प्रभाव से पहाड़ी चित्र-शैली में शिल्पगत सौष्ठव और नफ़ासत अवश्य आई और वह सुकोमल शैली के रूप में विकसित होकर राज-प्रासादों तक ही सीमित हो गई। आरम्भ्कि दौर में बसोहली तथा अन्य पहाड़ी उपशैलियों में जो सहज वेग जिसे विद्वानों ने 'सैवेज इन्टैन्सिटी' आदिम प्रखरता का नाम दिया है निश्चित रूप से स्थानीय लोक कला परम्परा से ही उद्भूत है और यही गुण बसोहली चित्रण शैली तथा उसी के समकक्ष अन्य पहाड़ी उपशैलियों में स्पष्ट रूप से सामने उभर कर आता है। बसोहली चित्र-ौली और अन्य पहाड़ी उप-ौलियाँ विकास के विभिन्न स्तरों में लोक कला और लोक धर्म से ही प्रभावित रही हैं और जो ि-ल्पगत परोक्ष प्रभाव इन चित्रों में दिखाई देते हैं वे सतही रहे हैं।

बसोहली शैली के उद्भव तथा विकास में आदिकालीन लोक-सम्मत कला परम्परा का निर्वाह उस शैली के चित्रों में उसके रंग-रेखांकन, प्रऔति-चित्रण, पशु-चित्रण, नारी-चित्रण, पोशाकें, आभूषण, वास्तु-चित्रण में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। बसोहली चित्राऔतियों के रंगांकन में लोक परम्परानुरूप अधिकतर गेरूआ लाल, सुनहरा पीला, औष्ण पीला, चमकीला बैंगनी, भूरा और हरा विभिन्न प्रकार के रंग

बसोहली चित्रकारों ने प्रयोग किये हैं जो आँखों से प्रवेश कर दर्शक को गहराई तक छू जाते हैं। रंगों का प्रयोग प्रतीकात्मकता के आधार पर हुआ है। प्रारम्भिक रंगो विशेषकर नीले और पीले, लाल और नीले का विरोधाभास वास्तव में बसोहली कलाऔतियों में हुआ है। शोख़ और चटख़ होने पर भी वह विभिन्न भावों को जैसे करूणा, उल्लास, उदासीनता और शोक के प्रति सजग रहते हैं। पीले, लाल, नीले, सलेटी, हरे और भूरे रंग के सपाट स्थल गीत-गोविन्द चित्र-श्रृंखला में देखने को मिलते हैं जो वास्तव में अद्भुत हैं।

प्रऔति-चित्रण और ऊँचे क्षितिज की अलंऔत बनावट बसोहली चित्रों की मुख्य विशेषताओं में से हैं मेघों का उमड़ना, बिजली का कड़कना और वर्षा की फुहार पात्रों की भूमिका को अधिक सार्थक बना देते हैं। बसोहली चित्र-शैली की अन्य विशेषता है उसका परम्परायुक्त तथा प्रतीकात्मक वृक्षांकन। बसोहली कलम के चित्रों में पशु-पक्षी के चित्रण का भी एक विशेष स्थान है। पशुओं में बहुधा गाय, बैल, घोड़ा, हाथी, शेर आदि का अंकन हुआ है तथा पक्षियों में मोर, मोरनी, तोता, मैना, हंस, पपीहा, चकोर-चकोरी विशेष रूप से दृष्टिगोचर होते हैं।

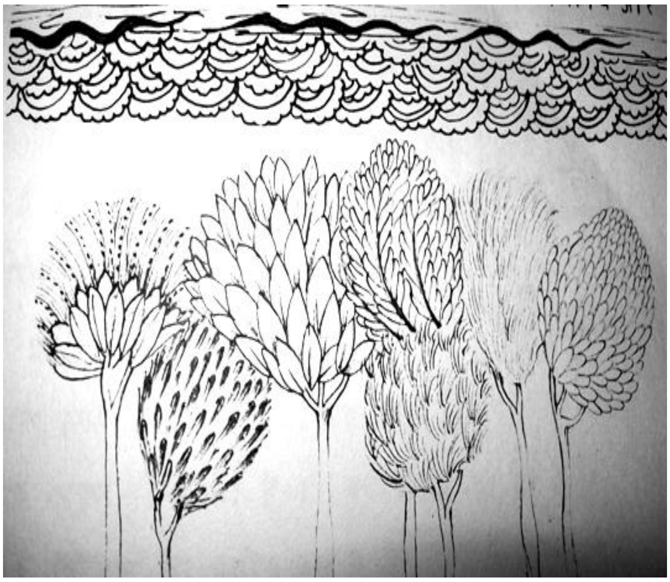

बसोहली लोक-शैली में नारियाँ अपने अंकन में ओजपूर्ण हैं तथा उनका निरूपण पुरूषों के ही समान है। ओष्ठ छोटे हैं, नाक लम्बी तथा झुकी हुई है, गाल भरे पूरे हैं तथा ठोडी कुछ गोलाकार सी है। बसोहली कलम मे परिधान का चित्रण भी विशिष्ट है। :ारीर चोली, घाघरा, दुपट्टा आदि झीने वस्त्र से झांकता हुआ नज़र नही आता। आभूषणों का अंकन भी प्रचुर मात्रा में हुआ है।

बसोहली क्षेत्र की लोक कला में धार्मिक भावनाओं का सहज निशेचन हुआ है, वह शास्त्रीय न होकर लोकपरक है। बसोहली लोक कला ने स्थानीय पहाड़ी लोक जीवन के मनोभावों को ही अभिव्यंजित नही किया है अपितु इस विधा ने लोक-जीवन की धार्मिक और सांसारिक आकांक्षाओं और अभिलाषाओं को भी व्यंजनात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की है। बसोहली शैली के चित्र सौन्दर्य-विधान की दृष्टि से लगभग

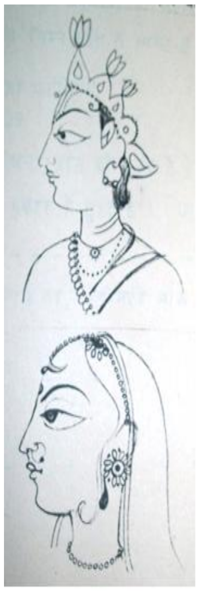

उन्ही तत्वों व नियमों के परिपालन की परम्परा दर्शाते है जिन्हें सामान्यतः भारतीय कला का मेरूदण्ड माना गया है।

बसोहली लोक-सृजन क्षमता का ढांचा केवल **रेखांकन** पर आधारित है। विधियाँ भिन्न हो सकती हैं, माध्यम बदल सकते हैं परन्तु रेखा का महत्व कला के अन्य तत्वों से अप्रभावित रहा है। लोक-कलाकार द्वारा अंकित चित्रों और बसोहली चित्रों के बीच बहुत ही समरूपता है। बसोहली चित्रों की रेखाओं में उपर्युक्त लोकतत्व का निर्वाह विभिन्न आऔतियों के निरूपण में लोक-सुलभ व्यंजनात्मक अभिव्यक्ति के रूप में हुआ है।

पहाड़ी लोक रूचि सदा ही प्रारम्भिक **रंगों** में रही है इसका प्रभाव यहाँ लोगों के पारंपरिक पहनावे में भी देखा जा सकता है वस्तुतः लाल और पीला रंग अपने विभिन्न रंगो के प्रति स्वाभाविक रूचि का भी एक कारण हो सकता है कि उनका तेज और परस्पर विरोधी रंगों के संयोजन का प्रयोग कम से कम समय में प्राप्त किया जा सकता है और तेज इसलिये कि वे उनकी जन्मजात कलात्मक प्रवृत्ति को सन्तुष्ट कर सके। लोक-चित्रण परम्परा से विकसित बसोहली कलम के चित्रों में भी रंग-विन्यास इसी लोक-रूचि से प्रभावित रहा है। बसोहली चित्रों में लोक प्रभावों के अन्तर्गत ही रंगों का प्रयोग भी हुआ है और इस प्रभाव में रंग वास्तविक मापदण्ड़ों के आधार पर प्रयुक्त न होकर भावनात्मक अभिव्यक्ति के उद्दे-य से ही प्रयोग में आये हैं।

बसोहली :ैली के सम्पूर्ण प्रस्तार में मानवाऔति की **संरचना व रूपांकन** प्रकिया में स्थानीय कलाकारों की रूचि लोक-सुलभ रही है। इस शैली के विशेषतः काल्पनिक विषयों पर आधारित चित्रों में स्त्री-पुरुष आऔतियों का अंकन लोक-सम्मत सहजता व सरलता की प्रवृत्ति एवं परम्परा को प्रतिपादित करता है जो तकनीकी आग्रहों से मुक्त सहज और स्थूल चित्र-निर्वाह के रूप में उभरा है।

यहाँ लोक-तत्वों के निर्वाह में बसोहली की स्थानीय लोक-कला का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर है। अनेक त्योहारों जैसे अहोई-अष्टमी, बछद्वहा-द्वाद-ी और नाग-पंचमी आदि पर बनाये गये चित्रों में मूलभाव से सम्बद्ध विभिन्न पशु-पक्षी प्रतीकात्मक रूप में प्रदर्षित किये जाते हैं। जैसे लोक-चित्रों में तोते का अंकन प्रजनन क्षमता तथा समृद्धि का द्योतक है। बहुला चौथे पर गाय और शेर का क्रमशः पृथ्वी और इन्द्र और नाग-पंचमी पर नाग को शिव के प्रतीक रूप में चित्रित किया जाता है। इन्ही लोक तत्वों का निर्वाह बसोहली चित्रों में दृष्टव्य हैं।

बसोहली शैली के चित्र-संयोजन में **वास्तु-शिल्प** की उपयोगिता के सम्बन्ध में कलाकारों ने अपनी सहज लोक-प्रवृत्ति का परिचय दिया है, जिसके अन्तर्गत सामान्य नेत्र दृषा की ओर कोई प्रयास नही। गहराई का सुझाव दूरस्थ वस्तु को निकट की वस्तु से ऊपर की ओर चित्रित करके दिया जाता है। इस प्रकार जिस वस्तु को निकट दर्शाना हो उसे चित्र-संयोजन में सबसे नीचे अंकित किया जाएगा और इसी क्रम में पूर्ण चित्र प्रक्रिया ऊपर की ओर बढ़ेगी।

बसोहली के कलाकारों ने अपने युग विशेष की सामान्य प्रवृत्ति से प्रभावित रहते हुए अनुभूति के सहज स्तर पर भारतीय कला की इस परम्परागत संयोजन विधि को ही अपनाया जो सुदृढ लोक-सम्मत रूप में परवर्ती युगों से हस्तांतरित होती आई है। इस लोक-परम्परा के अन्तर्गत अग्रभूमि तथा पृष्ठभूमि को स्पष्ट भेद से मुक्त रखते हुए उसमें सपाट तल पर विभिन्न रूपाकारों को सहज तथा भावोत्पादक योजना में संयोजित किया जाता है। इस प्रकार की संयोजन प्रक्रिया के अन्तर्गत विभाजित तल के समीप क्षेत्रों में एक नि-चित तारतम्य होने के कारण चित्र में विभिन्न तत्वों में वांछित सन्तुलन तथा सहज एकात्मकता का भाव प्रदर्षित होता है।

पश्चिमी हिमालयी प्रदष के विभिन्न क्षेत्रों-चम्बा, कुल्लू, मण्डी, जम्मू, गुलेर व कांगडा आदि में पहाडी कला आन्दोलन विशिष्ट क्षेत्रीय परम्पराओं को लिये हुए बसोहली से आरम्भ हुआ। बसोहली शैली का समय 17वीं शताब्दी से लेकर 19वीं शताब्दी के अन्त तक रहा है। 18वीं शती में बसोहली शैली अपनी सर्वोच्च अवस्था पर पहुँच गई थी। सामान्यतः बसोहली चित्रों में विभिन्न तत्वों के संयोजन में इन जैविक तथा वानस्पत्य सत्ताओं के विभिन्न रूपाकारों की लोक-सुलभ संरचनाओं का मनोहारी चित्रण हुआ जिनमें लोक चित्रकारी में अवस्थित कतिपय आदिम आग्रह गौण हो गये हैं और अनेक कोमल मानवीय भावस्थितियाँ पूर्ण निखार के साथ सहज ही रूपायित हुई हैं।

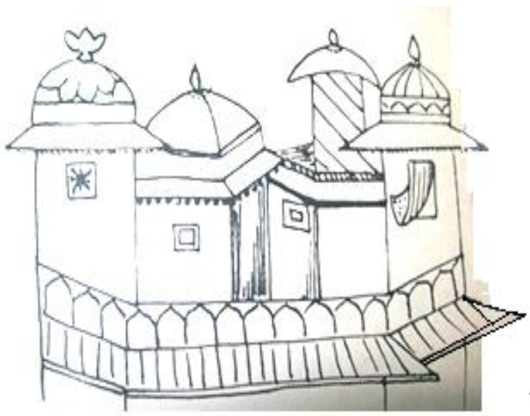

अन्य स्थानीय पहाड़ी शैलियों के समान बसोहली शैली की दक्षता व श्रेष्ठता स्थानीय कलाकारों की अपनी विषयवस्तु की गुणधर्मी महानता के प्रति मनोवेग प्रतीती की ही उपज थी। बसोहली शैली में धार्मिक, लौकिक, श्रृंगारिक, दरबारी आादि सभी क्षेत्रों से अपने विषय लिये तथा नयनाभिराम अभिव्यक्ति के माध्यम से अपनी निजि विशेषताओं को प्रकाषित करते हुए पहाड़ी कला के सामान्य धारा प्रवाह में अपना महत्वपूर्ण योगदान किया। भानुदत्त औत ''रासमंजरी'', जयदेवऔत ''गीतगोविन्द'', बिहारीऔत

''सतसई'', के काव्यमय विषयों को हृदयस्पर्षी सहज, स्वच्छंद, सादगी के साथ अभिव्यक्त किया है। चित्रों का विषय समुचित पहाडी कला के अनुरूप ही रहा है जिनमें राजाओं के व्यक्तिचित्र, पौराणिक कथाऐं व सामाजिक रीतियों का अंकन हुआ है।

निःसन्देह कला का भरण-पोषण भले ही राजाश्र्य में हो पर कलाकार लोक जीवन से हटकर नही जिया है। इस प्रकार समस्त पहाडी कला के अनुरूप व अनुपाततः बसोहली कलम की पृष्ठभूमि में लोककला की समृद्ध परम्परा कहीं अधिक दृष्टिगोचर होती है। बसोहली शैली अपनी कुछ विशिष्ट बातो की ओर ध्यान देने से अलग पहचानी जा सकती है। बसोहली चित्रों मे ग्रामीण प्रभाव स्पष्ट है। इन चित्रों की भाषा सीधी-सादी है, दौड़ती रेखायें व चटकते रंग हैं। आऔतियों का संयोजन दृढ़ व आदिम हैं जो नाटकीय ढ़ंग से प्रबल मीन चक्षुओं सहित रेखांकन हुआ है।

अपने अति परिष्औत रूप में जब पहाड़ी चित्रकला लोक सम्मत प्रतीकों, प्रतिमानों तथा लोकधर्म से विमुख होकर महलों और अट्टालिकाओं में सिमट गई तो अपने मातृस्त्रोत लोक-कला से अलगाव के लक्षण भी उसमें उभरने लगे। अन्ततः अपने मातृ-स्त्रोत से अलग होकर यह कला शैली विषय वस्तु व शिल्प सौष्ठव के लिए बहिर्मुखी और पराश्रित हो गई और उस काल के चित्र मुग़ल प्रभाव के अर्न्तगत उसी प्रकार के विषयों पर बनने लगे जो राजा-रजवाड़ों की रूचि-शुचि के अनुकूल थे। राजमहलों में बसे राज्य-पराश्रयों पर आश्रित यह कला आन्दोलन कुछ अन्तराल की चकाचौंध के बाद सामंतशाही व्यवस्था के ह्रास के साथ ही एकदम लड़खड़ा कर समाप्त हो गया। परन्तु लोक रूचि के अनुकूल लोक सम्मत प्रतीकों के माध्यम से पारम्परित लोक कला आज भी पहाड़ी जनजीवन में उसी प्रकार चिर-प्रवाहित है जैसी वह सदियों पहले थी जब ग्राम्य सामाजिक व्यवस्था का पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों में विकास हुआ था।

1. डा0 मधु जैन 'बसोहली चित्र शैली में लोक तत्व'(शोध ग्रन्थ-1985) पृष्ठ-136-140।
2. डब्ल्यू जी आर्चर, इण्डियन पेंटिंग्स फ्रॉम पंजाब हिल्स, लन्दन-1973 पृष्ठ-138।
3. कार्ल खण्डालावाला, पहाड़ी मिनियेचर पेंटिंग, बॉम्बे-1958, पृष्ठ-338।
4. जे सी फ्रेंच, हिमालयन आर्ट, आक्सफोर्ड-1931, पृष्ठ-16।